[2014] 6 एस.सी.आर. 577

कंडापझा नादर एवं अन्य

बनाम

चित्रागनीअम्मल एवं अन्य

16 अप्रैल, 2007

[डॉ. अरिजित पसायत और एस.एच. कपाड़िया, न्यायमूर्तिगण]

दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 - आदेश 2 नियम 2, आदेश 9 नियम 9, आदेश 22 नियम 10 और आदेश 23 नियम 1 (4) - वाद का वापस लिया जाना - नया वाद दायर करने की स्वतंत्रता के बिना - इसका प्रभाव - पश्चातवर्ती वाद में, वाद वापस लेने वाले पक्षकार की प्रतिरक्षा पर - अभिनिर्धारित: बिना किसी न्यायनिर्णयन के ऐसा वापस लिया जाना, डिक्री का गठन नहीं करता है, इसलिए यह पश्चातवर्ती वाद में प्रतिरक्षा को बाधित/वर्जित नहीं कर सकता।

वादी, जो कि यहाँ उत्तरदाताओं के पूर्वाधिकारी हैं, ने उत्तरदातागण -अपीलार्थीगण के विरुद्ध एक वाद दायर किया, जिसमें उन्होंने प्रश्नगत संपत्ति का स्वामी होने का दावा किया, जिसे उन्होंने 'सी' से खरीदा था। वादी के अनुसार, प्रतिवादीगण ने एक कपटपूर्ण हस्तांतरण विलेख के बल पर संपत्ति पर कब्ज़ा कर लिया था। प्रतिवादीगण द्वारा प्रश्नगत संपत्ति के संबंध में दायर किए गए पूर्ववर्ती वाद को उनके द्वारा द्वितीय अपील के चरण में, नया वाद दायर करने की अनुमति के बिना, वापस ले लिया गया था।

विचारण न्यायालय ने वादी को वाद-संपत्ति का हकदार ठहराया। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने *अन्य बातों के साथ-साथ* **यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादीगण द्वारा पूर्ववर्ती वाद को वापस लिए जाने से वादी पश्चातवर्ती वाद दायर करने से वर्जित हो गया था, लेकिन इससे प्रतिवादीगण की प्रतिरक्षा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि** *प्राङ्न्याय* **के सामान्य सिद्धांतों को लागू करके, प्रतिवादीगण द्वारा अपने पूर्ववर्ती वाद को वापस लिए जाने के आलोक में उनकी प्रतिरक्षा वर्जित थी।**

इस न्यायालय में अपील में, अपीलकर्ता-प्रतिवादियों ने तर्क दिया कि नया मुकदमा वर्जित नहीं था और आदेश 23 नियम 1 (4) मामलों के तथ्यों पर लागू नहीं था।

अपील को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित : जब न्यायालय बिना कोई अधिनिर्णयन किए, नया मामला दायर करने की स्वतंत्रता दिए बिना मामले को वापस लेने की अनुमति देता है, तो वापसी की अनुमति देने वाला ऐसा आदेश डिक्री नहीं माना जा सकता है और यह वर्तमान याचिकाकर्ताओं को मुकदमेबाज़ी के दूसरे दौर में प्रतिरक्षा करने से वंचित नहीं कर सकता है। यदि वादी मुकदमा वापस लेता है, तो ऐसी वापसी की अनुमति देने वाला न्यायालय का आदेश दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 2(2) के तहत डिक्री नहीं माना जाता है। वह किसी भी स्थिति में, वर्तमान याचिकाकर्ताओं (दूसरे दौर में प्रतिवादियों) को यह दलील देने से नहीं रोकेगा कि वादी के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख सच्चा और वैध नहीं था।

[कंडिका 19) [181-सी-ई]

(रानी) कुलंदई पांडिची और अन्य **बनाम** *जींद्रन रामास्वामी पांडिया थेवन* **एआईआर (1928) मद्रास 416;** *सरस्वती बाला सामंत और अन्य बनाम सुराबाला दासी और अन्य, एआईआर (1957) कलकत्ता 57; देवस्सी* **बनाम** *एंथोनी,* **एआईआर (1969) केरल 78** *और नाथजी और अन्य बनाम लंगुरिया और अन्य,* **एआईआर (1925) इलाहाबाद 272, संदर्भित।**

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: वर्ष 2000 की दीवानी अपील संख्या 5107

मद्रास उच्च न्यायालय के दिनांक 30.04.1999 के निर्णय और आदेश से, जो द्वितीय अपील संख्या 230, वर्ष 1987 में पारित किया गया।

अपीलकर्ताओं की ओर से वी. प्रभाकर, रामजी प्रसाद, वी. सुब्रमणि और रेवती राघवन।

न्यायालय का निर्णय द्वारा सुनाया गया था:

डॉ. अरिजित पसायत, न्यायमूर्ति: 1. इस अपील में चुनौती मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्णय को है, जिसके द्वारा उन्होंने दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 100 के तहत उत्तरदाताओं द्वारा दायर द्वितीय अपील को स्वीकार किया था। उत्तरदाता मूल वादी के कानूनी प्रतिनिधि हैं।

2. वादी के अनुसार, मुकदमा संपत्तियां मूल रूप से एक चेलिया नादर की थीं, उसने दिनांक 26.2.1973 के पंजीकृत विक्रय विलेख प्रदर्श ए-1 के तहत मुकदमा संपत्तियां खरीदी थीं, प्रतिवादी 1 से 3 ने धोखाधड़ी से अपने पक्ष में एक हस्तांतरण विलेख तैयार कर लिया; प्रतिवादियों ने इससे पहले जिला मुंसिफ न्यायालय, श्रीवैकुंटम के समक्ष मूल मुकदमा संख्या

298, वर्ष 1973 संस्थित किया था, प्रतिवादियों ने निषेधाज्ञा के आदेश प्राप्त कर लिए और मुकदमा संपत्तियों में प्रवेश करने में सफल रहे; प्रतिवादियों का कोई अधिकार नहीं है, मुकदमा मूल मुकदमा संख्या 298, वर्ष 1973 सुनवाई के बाद खारिज कर दिया गया था, अपील में, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने उक्त मुकदमे के वादियों के पक्ष में डिक्री पारित कर दी, वर्तमान वादी ने द्वितीय अपील संख्या 8, वर्ष 1977 दायर की, उक्त द्वितीय अपील के लंबित रहने के दौरान, उक्त मुकदमे यानी मूल मुकदमा संख्या 298, वर्ष 1973 को वापस लेने की अनुमति दी गई लेकिन उसी वाद-कारण पर नया मुकदमा दायर करने की स्वतंत्रता के बिना, प्रतिवादियों का मुकदमा संपत्ति में कोई अधिकार नहीं है और जिन प्रतिवादियों का कोई अधिकार नहीं है, वे 11.6.1973 से मुकदमा संपत्तियों का उपभोग कर रहे हैं।

3. वादियों का यह भी मामला था कि प्रतिवादियों ने 1500/- रुपये मूल्य के ओडाई के पेड़ों को काट दिया और ले गए; प्रतिवादी 1973 से मुकदमा संपत्तियों पर स्थित 42 ताड़ के पेड़ों से ताड़ी निकाल रहे हैं; प्रतिवादियों ने 200/- रुपये मूल्य के दो ताड़ के पेड़ों को भी काट दिया और ले गए; प्रतिवादी मूंगफली की खेती कर रहे हैं और उन्होंने 1000/- रुपये की आय प्राप्त की है; ताड़ के पेड़ों से प्रति वर्ष 400/- रुपये की आय प्राप्त होगी; प्रतिवादी 1 और 3 पिछले अंतःकालीन लाभ के रूप में 5100/- रुपये का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हैं और वादी, प्रतिवादियों से पिछले और भविष्य के अंतःकालीन लाभ के साथ-साथ कब्जे की वसूली के हकदार हैं।

4. प्रतिवादी 1 और 3 ने एक लिखित बयान दाखिल किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह दलील दी गई कि मुकदमा संपत्तियां मूल रूप से चेलिया नादर और उनके भाई की थीं; प्रतिवादियों ने 8.10.1971 को चेलिया नादर से संपत्तियां खरीदी थीं, वर्तमान वादी ने प्रतिवादियों के कब्जे में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया था, वादी ने चेलिया नादर से मुकदमा संपत्ति नहीं खरीदी थी, उक्त मुकदमे के खारिज होने पर वर्तमान प्रतिवादियों ने प्रथम अपील संख्या 51, वर्ष 1975 दायर की थी जिसे स्वीकार और डिक्री किया गया था; वर्तमान वादी द्वारा दायर द्वितीय अपील लंबित थी, द्वितीय अपील के लंबित रहने के दौरान, वर्तमान प्रतिवादियों ने मुकदमे को ही वापस ले लिया क्योंकि वे चेलिया नादर द्वारा विक्रय विलेख के निष्पादन को साबित नहीं कर पाए थे, वादी को यह मुकदमा संस्थित करने का कोई अधिकार नहीं है, वादी मुकदमा संपत्ति का

हकदार नहीं है, वादी पेड़ों की किसी भी आय या मूल्य या ताड़ के पेड़ों से होने वाली आय का हकदार नहीं है और यह मुकदमा खारिज किए जाने योग्य है।

5. नवाई के बाद, विचारण न्यायालय ने माना कि वर्तमान मुकदमे में वादी मुकदमा संपत्ति का हकदार है और वादी कब्जा वसूल करने का हकदार है, प्रतिवादी 1 और 3 पिछले अंतःकालीन लाभ के रूप में 2,760/- रुपये का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हैं और वादी संहिता के आदेश 20 नियम 12 के तहत निर्धारित किए जाने वाले भविष्य के अंतःकालीन लाभ का हकदार है।

6. प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी संख्या 4 से 5 को प्रथम अपील में पक्षकार के रूप में पक्षोजित नहीं किया गया है: वादी के अनुसार उसने प्रदर्श ए1 के तहत 26.2.1973 को चेल्लैया नाडार से वाद-संपत्ति खरीदी थी। प्रतिपक्षी प्रतिवादीगण ने भी 8.10.1971 को प्रदर्श बी -7 के तहत चेल्लैया नाडार के भाइयों से वाद-संपत्ति खरीदी थी और संपत्ति पर कब्ज़ा होने का दावा किया था। पूर्ववर्ती वाद मूल वाद संख्या 298/1973 में पारित आदेशों की अत्यधिक प्रासंगिकता है और वे इस प्रकार हैं:

> "कुछ लंबी बहसों के बाद, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री के. सार्वभौमन ने वाद वापस लेने की अनुमति की प्रार्थना की। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री गणपति सुब्रमण्यम ने कहा कि अनुमति दी जा सकती है बशर्ते उन्हें नया वाद दायर करने की स्वतंत्रता न दी जाए। इस कथन को अभिलेख पर लेते हुए मैं वाद वापस लेने की अनुमति देता हूँ और यह स्पष्ट करता हूँ कि वादीगण-उत्तरदाताओं को नया वाद दायर करने की कोई स्वतंत्रता नहीं होगी। तदानुसार वाद खारिज माना जाएगा। कोई खर्च नहीं।"

7. उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी की कि आदेश XXIII नियम 1(4)(बी) के निबंधनों के अनुसार जब वाद का कोई पक्षकार, नया वाद संस्थित करने की अनुमति के बिना वाद वापस लेता है, तो पक्षकार ऐसी विषय-वस्तु या दावे के ऐसे भाग के संबंध में नया वाद संस्थित करने से प्रवारित हो जाएंगे। उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी की कि पूर्ववर्ती वाद इसलिए खारिज कर दिया गया था क्योंकि प्रतिवादी ने नया वाद संस्थित करने के लिए आवश्यक अनुमति प्राप्त किए बिना द्वितीय अपीलीय चरण में पूर्ववर्ती वाद वापस ले लिया था। इसलिए, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्राङ्न्याय के सामान्य सिद्धांत आकर्षित होते हैं और उन्हीं पक्षकारों

के बीच पूर्ववर्ती वाद में पारित आदेशों के आलोक में प्रतिवादी का दावा वर्जित है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने यह टिप्पणी की थी कि वापस लिए जाने से वादीगण पश्चातवर्ती वाद दायर करने से वर्जित हो गए थे, लेकिन इससे प्रतिवादीगण की प्रतिरक्षा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा था।

8. अपीकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क देने के लिए कई निर्णयों का उल्लेख किया है कि नया वाद वर्जित नहीं है और आदेश XXIII नियम 1 (4) इन मामलों के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। सूचना के बावजूद उत्तरदाता की ओर से कोई उपस्थिति नहीं है।

9. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्क को समझने के लिए, आदेश XXIII, नियम 1(4) को उद्धृत करना उचित होगा, जो इस प्रकार है:

"1(4) जहाँ वादी-

(क) उप-नियम (1) के तहत किसी वाद या दावे के भाग का परित्याग करता है, या

(ख) उप-नियम (3) में संदर्भित अनुमति के बिना किसी वाद या दावे के भाग को वापस लेता है,

तो वह ऐसे खर्चों के लिए दायी होगा जो न्यायालय अधिनिर्णित करे और वह ऐसी विषय-वस्तु या दावे के ऐसे भाग के संबंध में कोई नया वाद संस्थित करने से प्रवारित होगा।

10. संहिता के आदेश IX नियम 9 और आदेश XXII नियम 10 पर भी ध्यान देना प्रासंगिक होगा, जो इस प्रकार हैं:

" *आदेश IX, नियम 9* - व्यतिक्रम के कारण वादी के विरुद्ध डिक्री नए वाद को वर्जित करती है:(1) जहाँ कोई वाद नियम 8 के तहत पूर्णतः या अंशतः खारिज कर दिया जाता है, वहाँ वादी उसी वाद-हेतुक के संबंध में नया वाद लाने से प्रवारित रहेगा। किंतु वह उस खारिज किए जाने के आदेश को अपास्त करने के लिए आवेदन कर सकता है, और यदि वह न्यायालय को यह समाधान करा देता है कि जब वाद सुनवाई के लिए पुकारा गया था तब उसके उपस्थित न होने का पर्याप्त कारण था, तो न्यायालय खर्चों या अन्यथा के संबंध में ऐसे निबंधनों पर, जिन्हें वह ठीक समझे, उस खारिज किए जाने के आदेश को

अपास्त करने का आदेश करेगा और वाद में आगे कार्यवाही करने के लिए एक दिन नियत करेगा।

आदेश XXII नियम 10(1) वाद में अंतिम आदेश से पहले समनुदेशन के मामले में प्रक्रिया (1) वाद के लंबित रहने के दौरान किसी हित के समनुदेशन, सृजन या न्यागमन के अन्य मामलों में, न्यायालय की अनुमति से, वह वाद उस व्यक्ति द्वारा या उसके विरुद्ध चालू रखा जा सकेगा जिसे ऐसा हित प्राप्त या न्यागमित हुआ है।

(2) किसी डिक्री का कुर्की किया जाना, जिसके विरुद्ध कोई अपील लंबित हो, एक ऐसा हित समझा जाएगा जो उस व्यक्ति को उप-नियम (1) का लाभ प्राप्त करने का हकदार बनाएगा जिसने ऐसी कुर्की कराई है।

11. मूल वाद स्वत्व की घोषणा और व्यादेश के लिए था। निर्विवाद रूप से वाद वापस लेने की अनुमति दी गई थी लेकिन नया वाद दायर करने की कोई स्वतंत्रता नहीं दी गई थी। आदेश XXIII नियम 1 को शामिल करने का उद्देश्य मुकदमों की बहुलता से बचना है। पूर्ववर्ती वाद में उत्तरदाता - प्रतिवादी ने स्वामी होने का दावा किया था। आदेश IX नियम 9 और आदेश XXII नियम 10 में निहित प्रावधान विभिन्न अवधारणाओं से संबंधित हैं। यह विषय-वस्तु है जो कि प्रासंगिक पहलू है। वादी को अपना मामला साबित करना होता है। आदेश II नियम 2 भी प्रासंगिक है, जो इस प्रकार है:

"आदेश II नियम 2 - *वाद के अंतर्गत संपूर्ण दावा होगा*: (1) प्रत्येक वाद के अंतर्गत वह संपूर्ण दावा होगा जिसे करने का हकदार वादी वाद-हेतुक के संबंध में है; किंतु वादी वाद को किसी न्यायालय की अधिकारिता के भीतर लाने के लिए अपने दावे के किसी भाग का परित्याग कर सकता है।

(2) *दावे के भाग का परित्याग* - जहाँ कोई वादी अपने दावे के किसी भाग के संबंध में वाद लाने का लोप करता है, या जानबूझकर उसका परित्याग करता है, वहाँ वह इस प्रकार लोप किए गए या परित्यक्त भाग के संबंध में बाद में वाद नहीं लाएगा।

(3) *कई अनुतोषों में से किसी एक के लिए वाद लाने का लोप* - जो व्यक्ति उसी वाद-हेतुक के संबंध में एक से अधिक अनुतोष पाने का हकदार है, वह ऐसे सभी अनुतोषों या उनमें से किसी के लिए वाद ला सकता है; किंतु यदि वह न्यायालय की अनुमति के

> बिना ऐसे सभी अनुतोषों के लिए वाद लाने का लोप करता है, तो वह इस प्रकार लोप किए गए किसी भी अनुतोष के लिए बाद में वाद नहीं लाएगा।"

12. आदेश II नियम 2 का संबंध "उस अनुतोष से है जो प्रदान किया जा सकता है" जबकि आदेश XXIII नियम 1 "विषय-वस्तु" को संदर्भित करता है। अनुमति का प्रदान किया जाना अधिकार का मामला नहीं है। विभिन्न विषय-वस्तु आदेश XXIII नियम 1 में निहित प्रावधानों से संबंधित हो सकती हैं। वर्तमान और पूर्ववर्ती दोनों वादों में विषय-वस्तु अनिवार्य रूप से समान है।

13. आक्षेपित निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि चूंकि वर्तमान याचिकाकर्ताओं ने वाद संख्या 298/1973 वापस ले लिया था और चूंकि याचिकाकर्ताओं को नया वाद संस्थित करने की कोई स्वतंत्रता नहीं दी गई थी, इसलिए याचिकाकर्ता प्रतिरक्षा में यह अभिवाक् उठाने से प्रवारित थे कि चेल्लैया नाडार द्वारा थंगराज नाडार के पक्ष में निष्पादित दिनांक 26.2.1973 का विक्रय विलेख सत्य और वैध नहीं था। इस संबंध में, मद्रास उच्च न्यायालय ने संहिता के आदेश XXIII नियम 1 (4) पर अवलंबन जताया।

14. हमारे समक्ष प्रश्न यह है कि: मुकदमेबाजी के प्रथम दौर में थंगराज नाडार द्वारा दायर द्वितीय अपील संख्या 8/1977 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का क्या प्रभाव है। वह आदेश दिनांक 27.7.78 का है। उस आदेश के तहत, मद्रास उच्च न्यायालय ने वर्तमान याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर वाद संख्या 298/1973 को वापस लेने की अनुमति दी थी, और यह स्पष्ट कर दिया था कि वर्तमान याचिकाकर्ताओं (पूर्ववर्ती वाद में वादीगण) को नया वाद दायर करने की स्वतंत्रता नहीं दी गई थी। क्या इसका अर्थ यह है कि याचिकाकर्ता-प्रतिवादीगण चेल्लैया नाडार द्वारा उनके पक्ष में निष्पादित दिनांक 8.10.71 के हस्तांतरण पत्र की वैधता के संबंध में प्रतिरक्षा उठाने से विबंधित थे?

15. *(रानी) कुलंदई पांडिची और अन्य बनाम इंद्रन रामास्वामी पांडिया थेवन,* एआईआर (1928) मद्रास 416 के मामले में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:

> "वाद वापस लेने की अनुमति विवादित मामलों में कोई निर्णय नहीं करती है और न ही किसी पक्षकार को कोई अधिकार प्रदान करती है, तथा इस तथ्य का कि वापस लेने वाला व्यक्ति उसी वाद-हेतुक पर नया वाद लाने से प्रवारित है, ऐसा प्रभाव होना नहीं कहा जा

सकता। *यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी वाद या अपील को वापस लेने की अनुमति देने वाला आदेश* दीवानी प्रक्रिया संहिता *के अर्थ के भीतर कोई डिक्री नहीं है।* हमें केवल *पाटलोजी बनाम गाम*, (1891) 15 बॉम्बे 370, जोगोदिंद्र नाथ बनाम सराई सुंदरी देबी, - (1891) 18 कल. 322 और *अब्दुल हुसैन बनाम कासी साहू*, - (1900) 27 कलकत्ता 362 का संदर्भ लेने की आवश्यकता है।"

(बल दिया गया है)

16. *सरस्वती बाला सामंत और अन्य बनाम सुराबला दासी और अन्य*, एआईआर (1957) कलकत्ता 57 के मामले में, कंडिका 3 के माध्यम से निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:

"(3) *वाद वापस लेने को अभिलिखित करने वाला आदेश कोई डिक्री नहीं है।* इसलिए, उस आदेश को डिक्री के रूप में तैयार करने का कोई प्रश्न ही नहीं था। हालांकि, वाद वापस लेने को अभिलिखित करने वाले आदेश को 'दीवानी रूल्स एंड ऑर्डर्स', वॉल्यूम I के भाग I, अध्याय I के नियम 187 के तहत औपचारिक रूप से तैयार किया जा सकता है, क्योंकि उस आदेश ने वादी द्वारा प्रतिवादी को खर्चों के भुगतान का निर्देश दिया था। इसलिए, हम इस तथाकथित डिक्री को एक आदेश मानते हैं।"

(बल दिया गया है)

17. *डेवासी बनाम एंथोनी*, एआईआर (1969) केरल 78 के मामले में, कंडिका 1 के माध्यम से निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:

"(1). संहिता की धारा 100 की उपधारा (1) की शर्तों में से एक शर्त यहाँ पूरी होती है। वास्तव में, अपीलार्थी-प्रतिवादी की अधीनस्थ न्यायलय में अपील को खारिज किए जाने का समर्थन इस संक्षिप्त आधार पर किया जा सकता है कि वह अपील संधारणीय नहीं थी। यह एक ऐसा मामला है जहाँ वादी ने आदेश XXIII के नियम 1 के उप-नियम (1) के तहत अपना वाद वापस ले लिया - वह ऐसा करने के लिए सक्षम था और उसे किसी की अनुमति की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि वह एकमात्र वादी था, प्रतिवादी, जैसा कि हम अभी देखेंगे, किसी भी अर्थ में वादी नहीं था - और विचारण न्यायालय द्वारा वाद को वापस लिए जाने के रूप में तथाकथित खारिज किया जाना वास्तव में खारिज किया जाना नहीं था, बल्कि केवल वापसी के तथ्य का एक अभिलेखन

था। *इसने वाद में विवादित मामलों में से किसी का भी निर्धारण नहीं किया - प्रतिवादी द्वारा ऐसा कोई दावा नहीं था जिसका निर्धारण किया जाना हो - और यह संहिता की धारा 2 (2) द्वारा परिभाषित डिक्री नहीं है।* यह आदेश IX के नियम 8 के तहत खारिज किए जाने के समान ही पायदान पर है, जिसे (चूंकि नियम द्वारा "खारिज" शब्द का उपयोग किया गया है जो गुणागुण पर निर्धारण को दर्शाता है) धारा 2 (2) में परिभाषा के अपवर्जन के खंड (बी) द्वारा स्पष्ट रूप से अपवर्जित किया गया है। यह आदेश XXIII के नियम 1 के उप-नियम (3) का प्रावधान है (जैसे आदेश IX के नियम 9 में है) न कि प्राङन्याय का कोई सिद्धांत, जो ऐसे मामले में वादी को उसी मामले के संबंध में नया वाद लाने से प्रवारित करता है। परिणाम यह होता है कि कोई डिक्री न होने के कारण संहिता की धारा 96 के तहत कोई अपील संधारणीय नहीं थी। इस संबंध में *कुलंदई बनाम रामास्वामी,* एआईआर (1928) मद्रास 416 पृष्ठ 418 पर, *सरस्वती बाला बनाम सुराबला दासी,* एआईआर (1957) कलकत्ता 57 और *रईसा सुल्ताना बेगम बनाम अब्दुल कादिर,* एआईआर (1966) इलाहाबाद 318 पृष्ठ 320 पर संदर्भ लिया जा सकता है।

(बल दिया गया है)

18. नाथजी और एक अन्य बनाम लंगूरिया और अन्य, एआईआर (1925) इलाहाबाद 272 के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहाँ दीवानी प्रक्रिया संहिता के आदेश 23 नियम 1(2) के निबंधनों के अनुसार वाद वापस लेने के आवेदन के मामले में, न्यायालय वाद को वापस लेने की अनुमति तो दे देता है किंतु नया वाद लाने की अनुमति देने से इनकार कर देता है, वहाँ न्यायालय का ऐसा आदेश त्रुटिपूर्ण है। *यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यदि विचारण न्यायालय के पास आदेश 23 नियम 1(2) के निबंधनों के अनुसार वाद वापसी की अनुमति देने का कोई कारण नहीं था, तो विचारण न्यायालय को नया वाद दायर करने की स्वतंत्रता चाहने वाले आवेदन को खारिज कर देना चाहिए था और उसे वाद की कार्यवाही में गुणागुण के आधार पर आगे बढ़ना चाहिए था।*

19. उपरोक्त निर्णयों के आलोक में, कानून की स्थिति स्पष्ट है कि जब न्यायालय किसी अधिनिर्णयन के बिना, नया वाद दायर करने की स्वतंत्रता दिए बिना वाद को वापस लेने की अनुमति देता है, तो वापसी की अनुमति देने वाला ऐसा आदेश कोई डिक्री नहीं हो सकता और

यह वर्तमान याचिकाकर्ताओं को मुकदमेबाजी के दूसरे दौर में प्रतिरक्षा लेने से विवर्जित नहीं कर सकता, जैसा कि आक्षेपित निर्णय में अभिनिर्धारित किया गया है। उपरोक्त निर्णय यह दर्शाते हैं कि यदि वादी वाद वापस लेता है, तो ऐसी वापसी की अनुमति देने वाला न्यायालय का आदेश संहिता की धारा 2(2) के तहत कोई डिक्री नहीं होता है। किसी भी स्थिति में, यह वर्तमान याचिकाकर्ताओं (दूसरे दौर में प्रतिवादीगण) को यह अभिवाक् उठाने से प्रवारित नहीं करेगा कि चेल्लैया नाडार द्वारा दिनांक 26.2.73 को थंगराज नाडार के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख सत्य और वैध नहीं था। अतः, दीवानी अपील को स्वीकार किया जाना आवश्यक है।

के.के.टी. अपील स्वीकार की जाती है

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।